International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor 6.972 Volume 10, Issue 4, April 2023
Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
Website-www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

आज के परिवर्तित परिपेकक्ष्य मे संगीतकार की परिस्थिति : ''कितनी सकारात्मक कितनी नकारात्मक

डॉ0 अम्बिका कश्यप
एसोसिएट प्रोफेसर, गुरू नानक गर्ल्ज कॉलेज, यमुनानगर।

मानव जीवन का सर्वप्रधान लक्ष्य आत्मिक आनन्द है और यह लक्ष्य संगीत के अतिरिक्त अन्य किसी माध्यम से प्राप्त नहीं हो सकता क्योंकि आत्मा स्वयं इतनी आनंदपूर्ण है, जिसका ज्ञान ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी को नहीं। वंदना के लिए भावुकता के अश्रु और तन्मयता की अवस्था नितांत आवश्यक है। काव्य और संगीत में उतना ही अंतर है जितना सगुण और निर्गुण में काव्य सगुण है और संगीत निर्गुण। काव्य केवल चेतन पर प्रभाव डाल सकता है भाषा वेद इसमें भी प्रतिबंध है। इसके विरुद्ध संगीत का प्रभाव संपूर्ण चेतन प्राणियों के साथ जड़ पदार्थों पर भी पड़ता है । इस प्रकार की स्थिति संगीत के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु से प्राप्त नहीं हो सकती। मनुष्य की इन विशेषताओं के संवर्धन हेतु तथा प्रत्यक्षीकरण के लिए ही संगीत का उद्‌भव हुआ है।

प्रसिद्ध कहावत है–

''जिस्म की गिज़ा खाना और रूह की गिज़ा गाना।''

आत्मा जितनी शुद्ध और निर्मल होगी, उतना ही संगीत से उसका लगाव होगा, उतना ही संगीत पवित्र एवं निश्चल होगा।

यह सर्वमान्य तथ्य है कि संगीत मानव भावनाओं की अभिव्यंजना का सशक्त एवं सुन्दरतम साधन है। वह निश्चय ही आत्मा की लयबद्ध, तालयुक्त, संवेदनशील व भावकुतापूर्ण वह मधुर वाणी है जो व्यक्ति विशेष के चेतन मन के मनोभावों को अभिव्यक्त करती है जिसका हमारी भारतीय संस्कृति से गहरा संबंध है। यदि संगीत को अपने– आप में संस्कृति ही माना जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। संस्कृति से ही सम्पूर्ण जीवन प्रतिबिंबित होता है।

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

शास्त्रीय संगीत भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का प्रधान परिचायक है। जैसे–जैसे मानव संस्कार परिष्कृत हुये, सभ्यता एवं संस्कृति में परिवर्तन हुये, वैसे–वैसे संगीत का भी विकास होता गया। संस्कृति समाज का दर्पण होती है तथा समस्त कलायें संस्कृति का दर्पण। संगीत की गणना ललित कलाओं में की जाती है। भारतीय संस्कृति विभिन्न जातियों के संघर्ष तथा समय–समय पर होने वाले अनेक राजनैतिक एवं सामाजिक संघर्षो के बावजूद अपने में कुछ ऐसे मूलभूत आदर्श समेटे हुए है जिसमें आज तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इन्हीं विशेषताओं, धारणाओं और आदर्शो का पालन संगीत कला में भी होता है।

संगीत की उत्पति सरस्वती, नारद आदि देवी – देवताओं द्वारा मानी जाने के कारण प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान संगीत द्वारा ही संपन्न होते है। इसलिए भारत के प्रत्येक धार्मिक तथा सांस्कृतिक प्रयोजनों में प्रयोग किया जाने वाला संगीत शास्त्रीय संगीत से जुड़ा हुआ है।

संगीत समाज का दर्पण होता है। जैसे–जैसे समाज और संस्कृति में परिवर्तन होते है वैसे–वैसे संगीत भी उनसे प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता। समाज में हो रहे परिवर्तन शास्त्रीय संगीत को अवश्य ही प्रभावित करते हैं। मुगलकाल में मियाँ तानसेन अकबर के नवरत्न थे और अपनी इच्छानुसार ही गाते थे। अन्य राजाओं–महाराजाओं ने अनुसरण करते हुए संगीतकारों को अपने दरबारों में रखा। कुछ राजा ऐसे भी थे, जिनको न तो संगीत का ज्ञान था और न ही सूझ परन्तु संगीतकारों को उन्हें फिर भी प्रसन्न करना पड़ता था। समय परिवर्तन हुआ देश को स्वंतत्रता की प्राप्ति हुई और हमारा शास्त्रीय संगीत राजदरबारों से निकल कर आम जनता के बीच पहुँचा। विभिन्न सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव गायन एवं वादन की विधाओं पर पड़ा। मध्यकाल में मुस्लिम संस्कृति के प्रभाव से ख्याल, तराना एवं ठुमरी का प्रचलन हो गया। ख्याल से पूर्व ध्रुपद–धमार प्रचार में था। सामाजिक परिवर्तित परिस्थितियों का प्रभाव न केवल गायन व वादन अथवा कलाकारों की मनोवृति पर भी पड़ा। परिवर्तित परिप्रेक्ष्य में उसी व्यक्ति को समाज में प्रतिष्ठा मिलती है जिसके पास साधन अधिक हो, रहन–सहन का स्तर ऊँचा हो। आधुनिक समय में कलाकार को भी समाज में रहते हुए सभी चीज़ों की आवश्यकता है। अधिकतर संस्थायें भी जो विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन करती है प्रतिष्ठित कलाकारों को ही बुलाने में अपनी प्रतिष्ठा समझती हैं वे नए नवेदित कलाकारों को अवसर प्रदान नहीं करती।

यदि राष्ट्रीय स्तर पर कभी कृषि विभाग के अधिकारियों को सांस्कृतिक गतिविधियों की देखरेख की बागडोर थमा दी जाती है। ऐसे में लिए गए निर्णय संगीतकार या कलाकार के मानस पटल पर क्या असर डालते होगें इसका अनुमान सभी लगा सकते है। संगीतकारों की भूमिका का वर्णन करने से पूर्व संक्षिप्त में संगीतकारों की समस्याओं को इंगित करने का प्रयास किया गया है।

आज का संगीतकार एक शिक्षक के रूप में कभी अपने शिष्यों को प्रभावित करने का प्रयास, एक साहित्यकार के रूप में पाठको को प्रभावित करने का प्रयास, एक कलाकार के रूप में श्रोताओं को प्रभावित

करने का प्रयास और संगीतकार के रूप में समाज की नित नई से नई नवीनताओं में खुद को स्थापित करने का प्रयास करता ही रह जाता है । एक साक्षात्कार में उस्ताद विलायत खा ने कहा था कि ''आजकल कार्यक्रम की प्रस्तुतीकरण के दौरान कार्यक्रम में बैठकर हम सिर्फ मसल्स दिखाते रहते हैं कि देखो हमने क्या तान मारी है। सोते हुए को जगाने का प्रयास करते रहते हैं और कहते हैं कि हमें आंख खोल कर देखो। हमें आंख की कान से सुनो, तुम कान की आंखों से मत देखो। कितनी गलती करते हैं हम परंतु मैं तो यह कहना चाहता हूं कि होना यह चाहिए की आंख बंद करके मुझे कान से देखो। जब कान से देखोगे तो पता चलेगा कि मैं कितना खूबसूरत हूं। सितार वादन ही क्या गाना बजाना वास्तव में ऐसा होना चाहिए कि हम उतनी देर के लिए किसी दूसरी दुनिया में खो जाए।

आज का शिक्षार्थी कक्षा में प्रवेश लेते ही यह जानने को उत्सुक रहता है कि संगीत शिक्षा से वह कितने समय में कलाकार बन समूचे विश्व पर अपना प्रभाव डाल पायेगा। सोचिये उस शिक्षक, उस संगीतकार की मानसिक स्थिति जिसने अपनी बाल्यकाल के वह वर्ष जो उसे क्रीड़ा या मित्रों के साथ बिताने थे, संगीत साधना में बिताये और आज उसी से यह प्रश्न किया जाता है कि समय कितना लोगे??

शास्त्रीय संगीत विज्ञान की भाँति एक प्रयोगात्मक कला है जिसके लिये प्रतिदिन प्रयोगशाला में जाना आवश्यक है। शैक्षणिक जागृति ही मात्र नहीं। रागदारी स्वरों के विभिन्न स्वरूप, गमक, मींड आदि को केवल अच्छे गुरू के सान्निध्य में ही रह कर सीखा जा सकता है। आज के इस परिप्रेक्ष्य में जहाँ सामाजिक माध्यम यानि Social Media की प्रधानता है वहाँ हर संगीतकार, कलाकार जिसने गुरू आज्ञा से परे कुछ भी नहीं देखा था वह खुद को ठगा सा महसूस करता है क्योंकि उसका वह शिष्य Youtube पर न जाने बिना सीखे कितने Likes,Views लिए बैठा है

इन परिस्थितियों में भी यदि भारतीय संगीत सुरक्षित है, परम्परागत है तो उसका श्रेय केवल और केवल इन्हीं संगीतकारों को है जो वर्तमान समय में भी शास्त्रीय संगीत की मर्यादा को कायम रखने के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने को सदैव तत्पर है। परिस्थितियाँ विषम हो, विकट हो, प्रतिकूल हो उनके जीवन का ध्येय केवल और केवल संगीत उपासना ही है।

चूंकि हर सिक्के के दो पहलू होते है उसी तरह जहाँ एक और खुद में सतम्भ रूप में विद्यमान संगीतकार है तो दूसरी और ऐसे महान् संगीतकार भी है जो केवल और केवल संगीत जैसी पवित्र विद्या के माध्यम से न केवल संगीत को अपितु समग्र समाज को प्रदूषित कर रहे है।

रफ्तार के इस युग में कम समय में ज्यादा की चाह, सरल से सरल मार्ग अपनाने की चाह, एक दिन में तीन–तीन मंचों पर कार्यक्रमों की प्रस्तुतिया । संगीत में सौंदर्यात्मक तत्वों की अपेक्षा चमत्कारी एवं तैयारी

के प्रति अधिक अभिरूचि जिसका एक कारण यह भी हो सकता है कि रियाज़ और परिश्रम की कमी कहीं न कही सपष्ट पल्लवित होती दिखाई देती है।

भयंकर नकारात्मक प्रभाव है वो आज के युवा वर्ग पर है अमुक शिक्षार्थी अमुक गुरू का शिष्य है तो वह प्रतियोगिता में प्रथम नही आना चाहिए क्योकि निर्णायक मण्डल की भूमिका में उस शिक्षार्थी का गुरू विराजमान नही। फलाने गुरू ने राग में जो सिखाया वह गलत है चाहे वह स्वरों का लगााव हो चाहे तान प्रक्रिया हो या फिर राग स्वरूप । परस्पर ईर्ष्या, खुद को परिपक्व साबित करने का जनून । दूर–दूर से शिक्षार्थी महाविद्यालयों , विश्वविद्यालयों में संगीत की शिक्षा प्राप्त करने आते हैं पर वहाँ पहुँचकार मिलता है तो संगीतकारों का पारस्परिक द्वन्द्व । कक्षा के प्रथम दिन कहा जाता है जाइये इतनी भी क्या जल्दी है घूमिये, कैन्टीन वाले को जानिये। क्या प्रभाव पड़ता होगा उन नव युवक और नव युवतियों पर जो संगीत सीखने की लालसा में न जाने कितनी कठिनाइयों को पार कर वहाँ पहुँचे होंगे। जो गुरू शिष्य परम्परा से नही सीख पाये वो जब इन महाविद्यालयों या विश्वविद्यालयो का दरवाजा खटखटाते हैं तो उन्हें मिलती है– नकारात्मक सोच, नकारात्मक विचार और संगीत के प्रति निराशा ।

हम सभी संगीतकार है । हम में से कुछ बहुत ऊँचे पदो पर आसीन है और जीविकोपार्जन भी प्रर्याप्त है। बहुत दुख होता है जब एक दिग्गज युग पुरूष संगीतकार को यह कहते देखती हूँ कि आपकी – संस्था में पिछले 2–3 वर्षो से Membership नही आई। क्या वो संस्था केवल उसी अग्रज की है आपकी या मेरी नही ? मेरा इशारा किसी व्यक्ति विशेष की ओर नही कृप्या कोई भी इसे अन्यथा न लें। कार्यक्रम के आयोजन में दरी बिछाने से लेकर निमंत्रण, कलाकार, श्रोता, अनुशासन और न जाने कितने ऐसे कार्य जो केवल और केवल दो कन्धो पर ही दिखाई देती है। कहाँ है हम सब, कैसा संगीत है हम सभी का, क्या सीख रहे है हम सभी। संगीत तो पत्थर को भी पिघला देता है सुना है कि दीपक भी जला देता है और जब चाहे तो मलहार गाकर वर्षा भी करवा देता हैं तो फिर क्यूं मौन है आज वो संगीत जिसकी जरूरत आज हर घर, हर गली, हर कूचे में हैं। आपको मुझे, हम सभी को यह तय करना होगा कि हमारा मार्ग क्या था और हम किस ओर चल पड़े। अपनी ही संस्कृति, अपने ही संगीत को सुरक्षित एवं संरक्षित करने के लिये एक बार फिर से प्रयासरत होना होगा।

चंद पंक्तियाँ जो वर्तमान समय में युवा वर्ग के लिये एक संदेशमात्र

''श्रृंगार की अपेक्षा जिसका चेहरा रियाज़ से अधिक दमकता हो।

व्यर्थ की चर्चाओं की अपेक्षा जिसे तानपुरे का नाद अधिक भाँता हो.....

किसी दीप की ज्योति से अधिक मंच का प्रकाश ही जिसे आर्कषक लगता हो

नये वस्त्रों की अपेक्षा जिसे सांगीतिक वेशभूषा ही अधिक जचती हो।

बाहरी सजावट से अधिक जिसे तानों में उलझना पसंद हो

किसी व्यंजन से अधिक रूचि कर जिसे रसिकों की तालियाँ लगें।

ऐसे ''नादब्रह्म'' के उपासक संगीतज्ञ बंधुओ को मेरा शत–शत नमन।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- http//hi.m.wikipedia.org>wiki
  चौबे सुशील कुमार – भारतीय संगीत का इतिहास
- परांजपे शरतचन्द्र श्रीधर – संगीत बोध
- परांजपे शरतचन्द्र श्रीधर – भारतीय संगीत का इतिहास
- मिश्रा विजय शंकरः अंतरनाद सुर और साज़
- मिश्रा विजय शंकर :संगीत के इंद्रधनुषी शिलालेख
- मिश्रा विजय शंकरः अंर्तगीत सोंग्स ऑफ द सोल